रूसी कहानी

कोंस्तांतीन पाउस्तोव्स्की

अक्टूबर की एक रात

अक्टूबर की एक रात (रूसी कहानी) : कोंस्तांतीन पाउस्तोव्स्की

अक्टूबर की एक रात (रूसी कहानी) : कोंस्तांतीन पाउस्तोव्स्की

October Ki Ek Raat (Russian Story in Hindi) : Konstantin Paustovsky

लिखने का काम मैं नगर की अपेक्षा गाँव में सदा अधिक आसानी से कर पाता हूँ। वहाँ छोटे-से लैम्प की फड़फड़ाती बत्ती, बाहर बाग में साँय-साँय करती हुई तेज हवा और कभी-कभी पाई जानेवाली वह पूर्ण निस्तब्धता, जब धरती मानो विश्राम करती हुई और गतिहीन होकर शून्य में लटकती सी लगती है, हर चीज़ ही हमें अपने विचारों को एकाग्र करने में सहायता देती है।

और बस इसीलिए 1945 की पतझड़ के अन्त में मैं रियाज़ान से कुछ दूर, एक गाँव की ओर चल दिया। यहाँ एक पुराना ग्राम-गृह था जिसके साथ झाड़-झंखाड़ से भरा बाग़ था। यहाँ

रियाज़ान की एक भूतपूर्व पुस्तकालाध्यक्ष वसिलीसा इओनोव्ना रहती थी और साहित्य-रचना करने के लिए मैं कई बार उसके पास ठहर चुका था। हर बार वहाँ जाने पर, मैंने उद्यान को अधिकाधिक बढ़ते, घर को अधिक पुराना होते और गृहस्वामिनी को पहले की अपेक्षा बुढ़ाते पाया था।

मैं अन्तिम जलपोत में मास्को से चला। जहाँ तक दृष्टि जा सकती थी, दूर-दूर तक कत्थई तट फैले हुए थे और पोत द्वारा गतिमान की हुई सुरमई लहरें बीच-बीच में उन्हें स्पर्श कर रही थीं। रात भर सैलून में लाल बत्ती जलती रही थी।

मुझे ऐसा लगा कि मानो मैं अकेला ही सफर कर रहा हूँ, क्योंकि अन्य मुसाफिर अपने गर्म कक्षों से बाहर निकलने का बहुत कम साहस करते थे। फौजी इंजीनियरों के दल का एक कप्तान इसका अपवाद था। उसकी आँखें सजीव थीं और चेहरे पर अंकित थीं विभिन्न ऋतुओं के प्रभावों की छाप! वह तटों को बड़े चाव से देखता हुआ डेक पर इधर से उधर लँगड़ाता हुआ घूम रहा था। तट शिशिर ऋतु की प्रतीक्षा में थे। वृक्ष निपत्ते थे। घास ज़मीन के साथ लग चुकी थी और मोटे-मोटे डण्ठल काले पड़ चुके थे। तट के साथ-साथ बसे गाँवों की चिमनियों से थोड़ा श्वेत धुआँ निकल रहा था। नदी भी जाड़े की प्रतीक्षा में थी। लगभग सभी जगह उतरने के स्थानों को दूर खाड़ियों में पहुँचा दिया गया था तथा नदी-दीप हटा दिये गये थे। चाँद की हल्की-हल्की चाँदनी के सहारे ही हमारा जलपोत अपना सफर जारी रख पा रहा था।

मैंने उस कप्तान से बातचीत शुरू की। हम दोनों को ही यह जानकर सन्तोष हुआ कि हमारी मंजिल जबोर्ये थी। जबोर्ये पहुँचने के लिए हमें नोवोस्योल्की उतरकर तट से बँधी नाव लेकर ओका नदी को पार करना और फिर चरागाहों से गुजरना था। हमारा जलपोत उसी रात नोवोस्योल्की पहुँचने वाला था।

“वास्तव में, मैं जबोर्ये नहीं, बल्कि कुछ आगे, वनरक्षक के घर जा रहा हूँ,” उसने समझाया। “किन्तु जबोर्ये तक हम साथ-साथ चलेंगे। यद्यपि मैं लाम पर हो आया हूँ और अपने वक़्त में बहुत कुछ देख चुका हूँ तथापि मुझे इस बात की बहुत खुशी है कि उन दूर के जंगलों में से अकेले ही नहीं गुजरना पड़ेगा। युद्ध के पहले मैं एक वनरक्षक था। अब सेना से विघटित होकर मैं अपने पुराने स्थान पर वापस जा रहा हूँ। मैं वन-विशेषज्ञ हूँ और मेरे लिए वनों में काम करने से अधिक खुशी की बात क्या हो सकती है! आप मुझसे वहाँ आकर मिलिएगा। मैं आपको ऐसी जगहें दिखाऊँगा कि आप दंग रह जायेंगे। लाम पर मैं लगभग हर रात उन्हें सपनों में देखा करता था।”

वह हँस दिया। हँसते हुए उम्र की छाप फीकी पड़ गयी और वह जवान प्रतीत हुआ।

जलपोत, काफ़ी रात गये नोवोस्योल्की पहुँचा। हाथ में लैम्प लेकर खड़े हुए एक चैकीदार के अतिरिक्त घाट बिल्कुल सूना था। केवल मुझे और जूयेव को ही उतरना था। ज्यों ही हम किरमिच के थैलों सहित गीले घाट पर उतरे, जलपोत हमें भाप

के बादल में लपेटता हुआ आगे चल दिया। चैकीदार अपना लैम्प लिये हुए उसी क्षण चला गया और हम अकेले रह गये।

“आओ, जरा-सी देर सुस्ता लें,” जूयेव ने कहा, “उन लट्ठों पर बैठकर दो-चार कश लगायें और तय करें कि आगे हमें क्या करना है।”

यह बात स्पष्ट थी कि वह जल्दी करना नहीं चाहता था। उसका बातचीत का अन्दाज़ इसका एक प्रमाण था। वह नदी की ओर से आनेवाली प्यारी गन्ध को अपनी साँसों में समेटता जा रहा था। मोड़ के दूसरी ओर से जब जलपोत का भोंपू रात के सन्नाटे को चीरता हुआ गूँजा तो वह हँस दिया। ये बातें भी इस बात का सबूत थीं कि वह इत्मीनान से अपनी मंजिल की ओर बढ़ना चाहता है। अपनी जानी-पहचानी, प्रिय और मनपसन्द जगह पर पुनः लौटकर वह बहुत ही खुश था।

हमने अपनी सिगरेटें समाप्त कीं और खड़े किनारे से नदी-दीप रक्षक सोफरोन के घर की ओर ऊपर को चढ़े। मैंने खिड़की पर दस्तक दी। सोफरोन ने इतनी जल्दी उत्तर दिया जैसे कि वह जागकर हमारी ही प्रतीक्षा कर रहा था। उसने मुझे पहचाना, मेरा अभिवादन किया और कहा:

“पानी चढ़ता जा रहा है। कल से दो मीटर चढ़ चुका है। वहाँ ऊपर भारी वर्षा हुई होगी। क्या आपने इस सम्बन्ध में कुछ सुना है?”

“नही, मैंने तो कुछ नहीं सुना।”

सोफरोन ने जम्हाई ली। "क्या किया जाये पतझड़ के दिन हैं! खैर, आइये चलें।"

ओका नदी दिन की तुलना में रात के समय अधिक चैड़ी दिखायी दे रही थी। नदी का पानी बहुत तेजी से बह रहा था। बीच-बीच में कोई मछली छपाक की आवाज़ पैदा करती हुई छोटी-छोटी लहरियाँ बना जाती थीं। ये लहरियाँ धीमी रोशनी में पानी की तेज धारा में विलीन हो जातीं और इस प्रकार उनका अस्तित्व समाप्त हो जाता।

दूसरे तट पर हम नीचे उतरे और मुश्किल से दिखायी देने वाली उस पगडण्डी पर चल दिये जो चारे की घास के खेतों की ओर जानेवाली सड़क से जा मिलती थी। हवा सूखने वाली घास और चिनार के पत्तों की गन्ध से बोझिल थी। सभी ओर चुप्पी थी। चाँद छिप रहा था और उसकी चाँदनी फीकी पड़ गयी थी।

हमें चार किलोमीटर चैड़े एक हरे भरे द्वीप को लाँघना था। फिर एक पुराने पुल से गुजरकर ओका की बालूपूरित शाखा को पार करना था। वहाँ रेत के टीलों के पीछे जबोर्ये था।

"जानते हैं वे सभी भूली-बिसरी स्मृतियाँ लौट रही हैं," कप्तान ने भावावेश में कहा। "मैं कुछ भी तो नहीं भूला हूँ। वे उधर दिखायी देने वाले वृक्षों के झुण्ड प्रोंरवा नदी के समीपवर्ती विल्लो के वृक्ष हैं, क्यों वही हैं न? देखिये तो, सेल्यान झील पर कितनी घनी धुन्ध छाई हुई है, और एक भी पक्षी की आवाज़ सुनाई नहीं देती। मुझे आने में देर हो गयी, बेशक-वे जा चुके

हैं। किन्तु हवा कैसी मनमोहक हैं! मानो हरियाली से छन-छनकर आ रही है। मैंने अन्य किसी जगह ऐसी हवा अनुभव नहीं की। ज़रा मुर्ग़ों की बाँग तो सुनो! यह आवाज़ त्रेबूतिनों से आ रही है। क्या आवाज़ है! हम कुछ किलोमीटर दूर निकल आये हैं, फिर भी उनकी आवाज़ सुनाई दे रही है।''

जैसे-जैसे हम आगे चलते गये, बातचीत का सिलसिला कम होता गया और अन्त में हम दोनों चुप हो गये। रात्रि का विषाद ऊँघते पानी, सूखी तथा काली पड़ी हुई घास के ढेरों और झाड़ियों से लिपटा हुआ था। रात्रि के इस मौन ने हम पर भी अपना जादू कर दिया।

हमारे दाई ओर एक झील थी। उसकी सतह हरियाली से आच्छादित थी। झील के पानी में कुछ-कुछ चमक थी। जूयेव लँगड़ा होने के कारण अधिक न चल सकता था। हम हवा से गिराये गये विल्लो के एक वृक्ष पर आराम करने के लिए बैठ गये। मैं इस वृक्ष से सुपरिचित था-वह कई वर्षों से यहीं पड़ा हुआ था और अब जंगली गुलाब की झाड़ियों में घिरकर लगभग छिप-सा गया था।

''ज़िन्दगी भी एक अज़ीब चीज़ है,'' जूयेव ने आह भरकर कहा। ''किन्तु कुल मिलाकर बुरी नहीं, सचमुच बुरी नहीं। युद्ध के बाद तो विशेष रूप से मुझे इसकी चेतना हुई है। यह एक अज़ीब एहसास है। आप अगर चाहें तो मुझपर हँस सकते हैं, किन्तु मैं अपना शेष जीवन देवदारु का एक वृक्ष उगाने में ही व्यतीत कर

सकता हूँ। मैं ठीक कह रहा हूँ। क्या पागलपन है, ठीक है न?"

"पागलपन कैसे, बिल्कुल नहीं," मैंने कहा। "क्या आपका परिवार है?"

"नहीं, मैं अविवाहित हूँ।"

हम चलते रहे। चाँद, ओका नदी के ऊँचे किनारे के पीछे छिप चुका था। किन्तु अभी सुबह होने में काफ़ी देर थी और पूरब दिशा भी बाकी सभी दिशाओं की भाँति ही अंधकारमय थी। चलते जाना कठिन हो रहा था।

"एक बात मेरी समझ में नहीं आ रही-यहाँ के लोगों ने रात के समय घोड़े चराना क्यों बन्द कर दिया? पहले तो वे प्रथम हिमपात होने तक ऐसा किया करते थे। और अब, देखो न, चरागाह में एक भी घोड़ा नहीं है।"

मैंने भी यह देखा था, मगर उस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया था। वास्तव में द्वीप इतना सूना था कि सम्भवतः वहाँ पर हम ही दो जीवित प्राणी थे।

तब मैंने पानी से भरे एक चैड़े भू-भाग की धुँधली रेखा देखी। यह बिल्कुल नई चीज़ थी। मैंने इसे गौर से देखा तो मेरे हृदय की गति बन्द हो गयी-क्या ओका के पुराने मार्ग में ऐसी भारी बाढ़ आ चुकी है?

"हम बहुत शीघ्र पुल पर पहुँच जायेंगे," जूयेव ने खुश होकर कहा, "और वह जबोर्ये से बहुत ही थोड़ी दूर है। समझिये कि

हम पहुँच ही चुके हैं।''

हम नदी के पुराने पाट पर पहुँचे। सड़क पूरी तरह स्याह रँगे पानी में डूबी हुई थी। पानी तेजी से हमारे पैरों के ऊपर से गुजरता हुआ नीचे-नीचे किनारों को काट रहा था। किनारे कमजोर पड़ चुके थे। इसलिए कहीं-कहीं से मिट्टी के टुकड़े टूटकर पानी में गिर जाते थे। वे 'छपक' की आवाज़ पैदा करते थे।

''वह पुल कहाँ गया?'' जूयेव ने चिन्तित होते हुए पूछा।

पुल वहाँ नहीं था। या तो वह बह चुका था अथवा डेढ़-दो मीटर गहरे पानी में डूबा हुआ था। जूयेव ने अपनी टार्च जलाई। गंदली लहरों की सतह पर केवल कुछ झुकी हुई झाड़ियाँ ही दिखायी दीं। बस, वहाँ केवल यही कुछ था।

''मैं कहता हूँ,'' जूयेव ने घबराकर कहा, ''हम फँस गये हैं। यही कारण है कि चरागाह इतने सूने हैं। निश्चय ही हम यहाँ अकेले हैं। आइये तय करें कि अब हमें क्या करना है।''

वह चुप हो गया। ''अगर मदद के लिए किसी को पुकारा जाये तो कैसा रहे?'' उसने कुछ रुककर सुझाव दिया।

किन्तु इससे कुछ भी लाभ होने की सम्भावना नहीं थी। जबोर्ये हमारी आवाज़ की सीमा के बहुत परे था। इसके अतिरिक्त, मैं यह भी जानता था कि वहाँ उनके पास नाव भी नहीं है। तट पर बँधी रहने वाली नाव वहाँ से लगभग दो किलोमीटर दूर नदी की ढाल की ओर, पूस्तिन नामक जंगल के पास थी।

“हमें तटीय नाव तक पैदल चलना होगा,” मैंने कहा। “यदि केवल...”

“यदि केवल क्या?”

“ओह कुछ नहीं। मैं रास्ता जानता हूँ।”

मैं कहना चाहता था, “यदि केवल अब भी वह चालू हो,” किन्तु मैंने कहा नहीं।

बहुत सम्भव था कि तटीय नाव वहाँ से हटा ली गयी हो, क्योंकि बाढ़ की लपेट में आये हुए चरागाहों में अब एक भी प्राणी नहीं था। तटीय नाव का रक्षक वसीली समझदार तथा स्वाभिमानी व्यक्ति था, वह भला नदी पर अपना समय क्यों नष्ट करने लगा था?

“तो अब हमें चलना चाहिये,” जूयेव ने सहमति प्रकट की। “कैसा घना अन्धकार है!”

उसने फिर से अपनी टार्च जलाई। हाय राम! पानी झाड़ियों को तो निगल भी चुका था।

“यह मजाक नहीं है,” वह बड़बड़ाया। “हमें जल्दी करनी चाहिये।”

हम चलते रहे। सहसा तेज हवा चलने लगी। वह तो मानो बौखलायी हुई थी और अंधकार को चीरती हुई बाजरे के समान बर्फ़-कण बिखरा रही थी। टूटकर गिरते हुए किनारों द्वारा पैदा की जाने वाली ‘छपक’ की आवाज़ का अन्तर अब पहले से कम

हो गया था। हम छोटे-छोटे टीलों तथा सूखी घास पर ठोकरें खाते आगे बढ़ते गये। घुटने-घुटने पानी में चलते हुए हमने दो खड्ड लाँघे। ये बहुधा बिल्कुल सूखे रहते थे।

"खड्ड तो भर भी चुके हैं," जूयेव ने कहा "मामला गड़बड़ है। किन्तु एक बात मेरी समझ में नहीं आ रही कि पानी इतनी तेजी से क्यों चढ़ता जा रहा है?"

वास्तव में ही यह समझना मुश्किल था। कारण कि शरद ऋतु की भारी बरसातों में पानी कभी इतनी तेजी से नहीं चढ़ता था और न ही द्वीप में बाढ़ आती थी।

"आपने गौर किया, यहाँ एक भी वृक्ष नहीं है," जूयेव ने कहा। "झाड़ियों के सिवा कुछ भी नहीं।"

अत्यधिक रौंदा हुआ मार्ग नाव की ओर जाता था। हमने पाँव के नीचे के कीचड़ तथा गोबर की गन्ध से इसे पहचान लिया था। नदी के पुराने पाट के दूसरी ओर देवदारु वृक्षों का जंगल जोरों से साँय-साँय कर रहा था।

सर्दी तथा अंधकार बढ़ता जा रहा था। पानी शाँ-शाँ कर रहा था। जूयेव ने फिर अपनी टार्च जलाई। पानी किनारे के बराबर आ चुका था और बड़ी-बड़ी लहरे चरागाहों को अपनी लपेट में ले रही थीं।

"घाट पर कोई है?" जूयेव चिल्लाया और उत्तर सुनने की आशा में चुप हो गया।

"कोई है?"

कोई जवाब न मिला। केवल प्रतिध्वनि सुनाई दी।

हम गला फाड़-फाड़कर चिल्लाये, किन्तु सब व्यर्थ। बर्फ़ने बरसात का रुप धारण कर लिया। हमारे ऊपर सभी ओर से बड़ी-बड़ी बूँदें पड़ने लगीं।

हम फिर चिल्लाये, किन्तु केवल वृक्षों की उदासी भरी साँय-साँय ही सुनाई दी।

"नाविक भी नहीं है," जूयेव ने नाराज होते हुए कहा। "ठीक ही तो है, वह अपनी एड़ियों को ठिठुराता हुआ यहाँ किसलिए बैठा रहे जबकि द्वीप में बाढ़ आ रही है और यहाँ एक भी प्राणी नहीं है, और न हो ही सकता है? क्या हिमाकत है-चन्द ही कदमों की दूरी पर घर है..."

मैंने समझ लिया कि अब तो संयोगवश ही हमारा बचाव हो सकता है-या तो पानी का चढ़ना बन्द हो जाये अथवा कोई नाव अकस्मात इधर आ निकले। सबसे ज्यादा दहशत पैदा करनेवाली बात थी-पानी का तेजी से बढ़ते जाना। हम इसका कारण समझने में असमर्थ थे। एक घण्टा पहले, आधी रात को आनेवाली इस भारी विपत्ति का सान-गुमान भी नहीं था। हम तो खुद ही ठीक मौत के मुँह में आ पहुँचे थे।

"हमें किनारे के साथ-साथ चलना चाहिये," मैंने सुझाव दिया। "हो सकता है, कहीं नाव मिल जाये।"

हम पानी से भरे गड्ढों से बचते हुए किनारे-किनारे चलने लगे। जूयेव ने अपनी टार्च जला रखी थी, किन्तु जब उसकी रोशनी धीमी पड़ने लगी तो उसने उसे बुझा दिया ताकि किसी आकस्मिक आवश्यकता के समय के लिए टार्च में कुछ दम बाकी रहे।

किसी काली तथा मुलायम वस्तु से मैंने ठोकर खाई। वह भूसे का एक छोटा-सा ढेर था। जूयेव ने दियासलाई निकालकर उसे आग लगा दी और वह ढेर पीली तथा भयानक ज्वालाओं में भभक उठा। उन शोलों के प्रकाश में बाढ़ का गंदला पानी, जहाँ तक दृष्टि काम कर सकती थी पानी में डूबे चरागाह और दूसरी ओर खड़ा देवदार का जंगल, सभी वस्तुएँ अंधकार से मुक्त होकर साफ़-साफ़दिखायी देने लगी थीं। वृक्षों की चोटियाँ नीचे-ऊपर लहरा और उदासी से साँय-साँय कर रही थीं।

हम टुकुर-टुकुर शोलों को देख रहे थे। हमारे मन में तरह-तरह के विचारों की भीड़ लगी थी।

सबसे पहले तो मुझे इस बात का अफसोस हुआ कि मैं जो कुछ लिखना चाहता था उसका दसवाँ भाग भी नहीं लिख पाया था। फिर यह ख़्याल आया कि अपनी मूर्खतावश इस तरह मरना कितनी बड़ी हिमाकत है। वह भी तब जबकि जीवन में ऐसे अनेक दिनों की आशा की जा सकती है जो उदासी भरे और शरद्कालीन होते हुए भी ताजगी से भरपूर और सुखद होंगे, जबकि पहली बर्फ़ न होते हुए भी हवा, जल, वृक्षों और गोभी

के पत्तों तक में उसकी अनुभूति होगी।

जूयेव भी कुछ इसी तरह सोचता होगा। उसने अपने ग्रेटकोट की जेब से सिगरेट का मुड़ा-मुड़ाया पैकेट निकाला और मेरी ओर बढ़ाया। हमने सुलगते हुए एक तिनके से सिगरेट जलायें।

"यह आग तो बहुत शीघ्र ही बुझनेवाली है," जूयेव ने धीमे स्वर में कहा। "पानी हमारे पैरों तक पहुँच गया है।"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया, क्योंकि कान पानी की आवाज़ की ओर लगे हुए थे। लहरों की छलछलाहट तथा जंगली की साँय-साँय को चीरती हुई पानी की मन्द तथा छप-छप की संक्षिप्त आवाज़ धीरे-धीरे नजदीक आती जाती थी। मैंने नदी की ओर मुँह किया और गला फाड़कर चिल्लाया:

"अरे ओ नाविक! इस ओर!"

"नाव आ रही है!" छोकरे की-सी आवाज़ में किसी ने नदी की ओर से जवाब दिया।

जूयेव ने भूसे के ढेर को हिलाकर जल्दी से साफ़किया। एक शोला भड़का और हजारों चिंगारियाँ उस अंधकार में चमक उठीं। जूयेव धीरे से हँसा।

"चप्पू," वह कहता गया। "चप्पू छपछपा रहे हैं। कभी कोई इस तरह घर के पास भी खोया है!"

"नाव आ रही है," इस आवाज़ ने मुझे भी अत्यधिक रोमांचित कर दिया था। अंधकार को बींधकर सुनाई देनेवाली इस आवाज़

ने मेरे मन में भ्रातृत्व और सहायता के उस पुराने रिवाज की याद ताजा कर दी जो हमारी जनता की अमर विशेषता है।

"हल्लो, रेत पर नीचे की ओर आ जाओ!" नदी की ओर से आती हुई आवाज़ गूँज गयी और केवल तभी मैंने यह अनुभव किया कि वह नारी का स्वर था।

हम जल्दी से नीचे, किनारे की ओर चल दिये। नौका अंधकार की गोद से निकलकर अग्नि की मद्धिम रोशनी में तैरती दिखायी दी और फिर तट से आ लगी।

"ज़रा रुको," नारी ने कहा। "मैं नाव का पानी निकाल दूँ।"

वह तट पर उतर आयी और उसने नौका को आगे की ओर खींच लिया। मैं उसका मुख नहीं देख सका। वह रूई की जाकेट और घुटनों तक के बूट पहने थी और सिर पर एक गर्म चादर ओढ़े थी।

"तुम लोग यहाँ कैसे आ फँसे?" उसने हमारी ओर देखे बिना तुनककर पूछा और नाव से पानी निकालने लगी।

उसने चुपचाप और मानो बिना कोई दिलचस्पी जाहिर किये, हमारी कहानी सुनी। इसके बाद पहले की तरह कड़ाई से बोली:

"मैं समझ नहीं पाती कि नदी-दीप रक्षक ने तुम्हें इसकी सूचना क्यों नहीं दी। आज रात को बाँध के फाटक खोल दिये गये हैं। जाड़े से पहले ऐसा ही किया जाता है। सुबह होने तक सारा द्वीप जलमग्न हो जायेगा।"

“और आप रात के समय कैसे इस जंगल में आ फँसी है, वनदेवी?” जूयेव ने मजाक करते हुए पूछा।

“मैं पूस्तिन से जबोर्ये की ओर अपने काम पर जा रही थी,’ उसने अनिच्छा से उत्तर दिया। “जब मैंने द्वीप में आग और कुछ लोग देखें तो यह अनुमान लगाया कि कहीं कुछ गड़बड़ अवश्य हैं। नाविक पिछले दो दिन से यहाँ नहीं हैं-ऐसा करना उचित भी है क्योंकि आजकल यहाँ नहीं हैं-ऐसा करना उचित भी है क्योंकि आजकल यहाँ उसके लिए कोई काम नहीं है। उसने अपने चप्पुओं को कहीं अलग से रख दिया था और उन्हें ढूँढने में मुझे काफ़ी समय लग गया। वे एक तम्बू में सूखी घास के नीचे पड़े थे।”

मैंने चप्पू सम्भाले, किन्तु मेरे बहुत जोर लगाकर चप्पू चलाने पर भी ऐसा लगता था कि नाव किनारे की ओर बढ़ने की बजाय, गंदले पानी, अंधकार और रात के साथ साथ किसी काले चैड़े गर्त की ओर खिंची चली जा रही है।

आखिरकार हम किनारे पर उतरे और रेत की ओर कदम बढ़ाने लगे। हम ऊपर की ओर जंगल में पहुँचे और सिगरेट के कश लगाने के लिए, वहाँ थोड़ी देर को रुके। वहाँ सड़ते हुए पत्तांें की गन्ध के साथ-साथ उष्णता तथा निस्तब्धता थी। वृक्षों की चोटियों को जोर से सरसराती हुई हवा भयावह ध्वनि पैदा कर रही थी। भयानक रात और कुछ देर पहले के ख़तरे की स्मृति सजीव हो उठती थी। किन्तु अब वही रात अत्यधिक भली और

सुन्दर लग रही थी। सिगरेट जलाने के लिए जलाई गयी दियासलाई की रोशनी में उस स्त्री का मुख मैत्रीपूर्ण और सुपरिचित लगा। उसकी भूरी आँखें हमें देखती हुई सकुचा रही थीं। और उसके भीगे हुए केश-कुण्डल गर्म चादर से बाहर झाँक रहे थे।

"अरे, यह क्या तुम हो, दाशा?" जूयेव ने अचानक बहुत धीमे स्वर में पूछा।

"हाँ, इवान मत्वेयेविच," वह धीरे से हँसी। उसका हँसने का अन्दाज़ ऐसा था मानो अपने राज को केवल वही जानती हो। "मैंने आपको फौरन पहचान लिया था, पर यह जाहिर नहीं होने दिया था। जबसे युद्ध समाप्त हुआ है हम आपके आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। हमें विश्वास था कि आप आयेंगे।"

"कभी-कभी ऐसा भी होता है!" जूयेव ने विस्मय के साथ कहा। "मैं चार वर्ष तक मोर्चे पर रहा और कई बार तो घड़ी-पल का भी भरोसा नहीं होता था, और अब मेरी ज़िन्दगी दाशा ने बचाई है। वह मेरी सहायिका थी। दाशा ने मेरे साथ वनों में काम किया है। मैंने ही इसे वनों के सब राज बताये-समझाये थे। तब यह सींक-सलाई सी दुबली-पतली लड़की थी, पर अब तो लम्बी और सुन्दर हो गयी है। इसीलिए यह गुमसुम तथा संजीदा भी हो गयी है।"

"नहीं नहीं, ऐसा कुछ नहीं," दाशा ने कहा। "यह केवल इसलिए कि बहुत अर्से बाद आपसे भेंट हुई है-और आप

वसिलीसा इओनोव्ना के यहाँ आये हैं, न?" जाहिर है कि उसने विषय बदलने के लिए मुझसे बात शुरू की थी।

मैंने हामी भरी और उन दोनों को भी कपड़े सुखाने, गर्माने और सुस्ताने के लिए उस आतिथ्यपूर्ण पुराने मकान में आमंत्रित किया।

रात के वक़्त हमारे इस तरह यकायक नमूदार होने पर वसिलीसा इओनोव्ना तनिक भी हैरान नहीं हुई। बुढ़ापे की जिस अवस्था को वह प्राप्त हो चुकी थी उसमें उसे कुछ भी आश्चर्यजनक नहीं लगता था और प्रत्येक विषय का वह अपने ढंग से अर्थ लगाती थीं।

"शुक्र है भगवान का कि आप लोगों की जान बच गयी। सोफरोन बिल्कुल खरदिमाग आदमी है, मैं तो सदा यही कहती हूँ," उसने हमारी परेशानियों का विवरण सुनकर कहा। "अज़ीब बात तो यह है कि आप लेखक होते हुए भी उसे पहली ही नज़र में न पहचान सके। ऐसा लगता है कि कभी-कभी लेखक भी भूल कर जाते हैं... खैर, मेरी प्यारी,' उसने दाशा की ओर मुड़ते हुए कहा, "बधाई हो। मुझे खुशी है कि आखिर तुम्हारा इवान मत्वेयेविच लौट आया।"

शर्म से दाशा के गाल गुलाब हो उठे। उसने जल्दी से एक बाल्टी उठायी और दरवाज़ा खुला छोड़कर तेजी से बाहर भाग गयी।

"अरे, तुम कहाँ चल दीं?" वसिलीसा इओनोव्ना चिल्लाई।

“समोवार के लिए कुछ पानी लाने जा रही हूँ,” दरवाज़े के पीछे से जवाब सुनाई दिया।

“आजकल की लड़कियाँ जाने कैसे हो गयी हैं,” वसिलीसा इओनोव्ना ने जूयेव की ओर जो कि व्यर्थ दियासलाई जलाने का यत्न कर रहा था, देखे बिना ही कहा।

“अकारण ही आवेश में आकर दौड़ने लगती हैं... किन्तु यह बहुत प्यारी लड़की है। दाशा मेरे जीवन की सबसे बड़ी खुशी है।”

“मेरा भी ऐसा ख़्याल है,” जूयेव ने आख़िर दियासलाई जला ही ली थी। “बहुत ही कमाल की लड़की है।”

हाँ, दाशा ने बाल्टी कुएँ में गिरा दीं। मैं उस कुएँ से बाल्टियाँ निकालने का हुनर जानता था। मैंने एक लम्बा बाँस लिया और दाशा की सहायता से अपने काम में जुट गया। दाशा के हाथ उत्तेजना के कारण बफ़र् जैसे ठण्डे पड़े हुए थे और वह बार-बार दुहरा रही थी:

“कैसी अज़ीब हैं न वसिलीसा इओनोव्ना! कैसी अज़ीब हैं!”

हवा ने बादलों के इधर-उधर बिखरा दिया था। सितारे अन्धकार की चादर में लिपटे उद्यान के ऊपर चमक रहे थे।

मैंने बाल्टी खोज निकाली और दाशा पानी पीने कि लिए झुकी। पानी से भीगे उसके दाँत अंधकार में चमके। “अब मैं भीतर जाऊँ तो कैसे!”

“कोई बात नहीं, आइये चलें।”

हम भीतर गये। लैम्प जल रहे थे। मेजपोश बदला हुआ था। दीवार की ओर से तुर्गनेव हमें शान्त भाव से देख रहे थे। काले चैखटे में जड़ी हुई यह उनकी अनूठी तस्वीर थी, इस्पाती भूमि पर बारीक नक्काशी वाली। हमारी मेजबान को इस चित्र पर बहुत नाज था।

1946

('समय के पंख' में से)